पूर्वोत्तर प्रभा
(सिक्किम विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित अर्धवार्षिक शोध पत्रिका)
Journal Home Page: **http://supp.cus.ac.in/**

'पीर पर्वत हो गई है' तथा 'तेस्रो घर' कहानी का तुलनात्मक अध्ययन

सोनामित लेप्चा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
विश्व भारती शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल
ईमेल: sonamitlepcha95@gmail.com

शोध सारांश: मनुष्य के जीवन में जब भी पहली घटना घटी, सुनाने के लिए जब भी उसके पास कुछ हुआ, सुनने के लिए जब भी उसे कोई मिला, तभी कहानी ने जन्म लिया। इसीलिए कहानी उतनी ही पुरानी है जितना कि मानव। इस सन्दर्भ में ई एम.फोसर्टर लिखते है-"कहानी मनुष्य की आदिम अवस्था से संबद्ध है। यह तब उत्पन्न हुई थी जब मनुष्य पढ़ना भी नहीं सीखा था, साहित्य के मूल रूप उत्पन्न हो रहे थे, इसीलिए कहानी हमारी आदिम प्रवृत्तियों को अपील करती है।" (Forster, 2002, pg. 47) कहानी अपने छोटे मुँह बड़ी बात कहने का साहस रखती है। कहानी सदैव अविकसित और विकसित दोनों प्रकार के मस्तिष्कों के लिए ज्ञान -प्रसार का साधन रही है। कहानी जैसी सीधी -सादी साहित्यिक विधा है, वैसी ही उसकी कला विशद और बहुशाखामय है।

सूचक शब्द: मनुष्य,आदिम, अवस्था, विकसित,अविकसित,मस्तिष्क आदि।

मूल लेख

आधुनिक साहित्य जगत् में 'कहानी' विधा की लोकप्रियता बहुत बढ़ गयी है। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा इसके सर्वाधिक प्रयोग हो रहे हैं और इसके विकास के लिए सभी सभ्य देशों के कहानीकार विशेष रूप से प्रयत्नशील हैं। सम्भवतः साहित्य की समस्त विधाओं में कहानी ही एक मात्र ऐसा माध्यम है, जो अपने लघु परिवेश में भी बृहत् जीवन को अभिव्यंजित करने में समर्थ है। भारतीय कथा साहित्य की भांति ही अन्य भाषाओं में भी कहानी की मान्यता प्राचीनतम साहित्यक विधा के रूप में है। प्राय: प्रत्येक देश के प्राचीन वाड्मय में कहानी के अस्तित्व के संकेत मिलते हैं। आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का आविर्भाव भारतेंदु युग में हुआ। किन्तु कहानी के आविर्भाव की दृष्टि से सन् 1900 में प्रकाशित 'सरस्वती ' पत्रिका की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसमें किशोरी लाल गोस्वामी की कहानी 'इंदुमती' प्रकाशित हुई। आलोचकों ने इस कहानी पर किसी बंगला कहानी के प्रभाव के साथ - साथ शेक्सपियर के नाटक 'टेम्पेस्ट' के प्रभाव की भी चर्चा की। आगे का दशक कहानी की उपलब्धियों की दृष्टि से उल्लेखनीय माना जा सकता है। माधव राव सप्रे की 'एक टोकरी भर मिट्टी'(1901), भगवान दास की 'प्लेग का चुड़ैल'(1902), पं. गिरिजा दत्त वाजपेयी की 'पंडित और पंडितानी'(1903), आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903) और बंग महिला की 'दुलाई वाली '(1907) आदि

कहानी महत्वपूर्ण थी। हिंदी कहानी यात्रा के प्रारम्भिक दौर से ही महिला कथाकारों ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करवाई है। हिंदी की प्रथम महिला लेखिका बंग महिला (राजेन्द्रबाला घोष)। तत्पश्चात कहानी के विकास के इसी क्रम में समकालीन कहानी की कमान महिलाओं ने बिल्कुल इस तरह संभाली हैं, जिस तरह वे अन्य गतिविधियों में मोर्चा सँभालती हैं।

समकालीन लेखिकाओं में मालती जोशी एक संवेदनशील कथाकार के रूप में विख्यात हैं। इनका जन्म 4 जून 1934 को महाराष्ट्र प्रांत के औरंगाबाद जिले में एक मध्यवर्गीय ब्राह्मण परिवार में हुआ। हिंदी की अग्रणी महिला कथाकार मालती जोशी गंभीर प्रकृति एवं आदर्श की मूर्ति हैं। श्रीमती मालती जोशी सजीव व्यक्तित्व की स्वामी हैं। वे संगीत और गीत की जानकार हैं। ऐसे ही भारतीय नेपाली साहित्य की प्रसिद्ध कथाकार लक्खी देवी सुन्दास जो अपनी रचनाओं से नेपाली साहित्य को समृद्ध बनाने में आजीवन लगी रही हैं। हिंदी साहित्य के विभिन्न विधाओं में साहित्यकारों ने नारी की अनेक रूपों को चित्रित किया हैं। उन विधाओं में कहानी एक प्रभावशाली विधा है। नारी जीवन की अनेक समस्याओं को केन्द्र में रखकर हिंदी साहित्य में अनेक कहानियां रची गयी हैं। चाहे वह पुरुष रचनाकार के द्वारा हो या चाहे स्त्री लेखिकाओं के द्वारा। कोई भी युग हो या कोई भी समाज हो, हर जगह स्त्री की समस्या समाज में दयनीय ही है। हिंदी कथा साहित्य में महिला लेखन अपनी भिन्न पहचान बनाने में अधिक सफल रहा। मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, दीप्ति खंडेलवाल, ममता कालिया, सूर्यबाला, नासिरा शर्मा, नमिता सिंह आदि महिला लेखिकाओं ने साहित्य-सृजन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया और हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। इन सभी महिला लेखिकाओं में मालती जोशी का अपना एक विशेष स्थान है। लेखिका पारिवारिक परिवेश से जुड़ी कहानीकार है।उन्होंने परिवार के सम्बन्धों का नया रूप प्रस्तुत करने का प्रयास किया है तथा परिवार से जुड़ी विभिन्न समस्याओं का चित्रण लेखिका की कहानियों में दिखाई देता है। ऐसे ही भारतीय नेपाली साहित्य ने भी भारतीय साहित्य को समृद्ध किया है।

भारतीय नेपाली साहित्य की प्रसिद्ध लेखिका लक्खी देवी सुन्दास का जन्म 27 मार्च सन् 1934 को कोलकाता में हुआ था। लेखिका ने भी अपनी साहित्यिक यात्रा में कविता के माध्यम से प्रवेश किया। किन्तु उन्हें वर्तमान में ख्याति एक कथाकार के रूप में मिली। लेखिका को सन् 2001 में इनके द्वारा रचित एक कहानी संग्रह 'आहत अनुभूति' के लिये उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। वह अपने 25 साल के इतिहास में यह पुरस्कार पाने वाली पहली भारतीय नेपाली महिला लेखिका बनीं।

पति द्वारा किसी कारण से छोड़ या त्याग दी जाने पर नारी माता-पिता के पास या स्वतंत्र रूप से रहती है, उसे परित्यक्ता नारी कहा जाता है। परित्यक्ता नारी स्वयं अपने पाँव पर खड़ी होने का प्रयत्न करती है। वह अकेले रहकर हर कठिनाइयों का या मुसिबतों का सामना करती हुई आत्मनिर्भर होकर जीवन जीती है। पत्नी पर एकअधिकार रखने वाला पति को जरा भी अपने एकाधिकार को ठेंस पहुँचने की भनक पड़ती है तो वह झटके से पत्नी को त्याग देता है। परित्यक्ता नारी को स्पष्ट करती हुई डॉ. माधवी जाधव लिखती हैं- "विवाह के पश्चात जब पति अपनी पत्नी का त्याग करता है, तब पति द्वारा त्यागी स्त्री को 'परित्यागता' कहा जाता है।" (जाधव, 2005, पृ. 126) स्पष्ट है कि पति द्वारा त्याग दी जाने वाली नारी को 'परित्यक्ता' नारी कहते हैं। पुरुष प्रधान संस्कृति में चारित्रिक पवित्रता का मापदण्ड अधिकतर नारी पर ही लगाया जाता है। हर पति चाहता है कि उसकी पत्नी चरित्रवान एवं पवित्र रहे। कभी-कभी रूचि -भेद, स्वभाव भिन्नता एवं

सामंजस्यता के अभाव के कारण पति पत्नी को त्याग देता है। परित्यक्ता नारी जीवन की एक त्रासदी यह है कि न वह विधवा होती है, न ही श्रीमती होती है। इन दोनों के बीच की स्थिति परित्यक्ता नारी की होती है। इन दोनों के बीच की स्थिति परित्यक्ता नारी की होती है। उसे पग -पग पर अपमानित -लांछित होकर जीना पड़ता है। परित्यक्ता नारी की हर जगह दुर्गति होती है। इसे स्पष्ट करती हुई मालती जोशी लिखती हैं -"पति से तिस्स्कृत नारी की हर जगह-जगह दुर्गति होती है -चाहे ससुराल में हो, चाहे पीहर में। वह तो बिना पेंदे की लुटिया होती है, जिधर चाहा लुढका दिया। बिना पैसे की नौकरानी होती है- जब चाहा, जैसा चाहा काम लिया और बस छुट्टी। जिसके पीछे चार बच्चे होते हैं, उसे तो यह जहर का घूँट पीना ही पड़ता है। अकेली जान हो तो कुएँ में कूद जाए कोई।" (जोशी, 1997, पृ. 96) नारी अस्तित्व को स्थापित करने के लिए कितना भी संघर्ष क्यों न करें, किन्तु व्यवहारिक स्तर पर उसे महत्व नहीं मिलता। प्राचीनकाल से लेकर आज तक नारी अपने अस्तित्व के लिए निरंतर संघर्ष करती चली आ रही है। सामाजिक जीवन में जब वह अपने स्वायत्त के लिए साहस, निर्भयता और आत्मनिर्भरता का परिचय देती है, सामाजिक परिवेश की परवाह न करके अपनी अलग पहचान बनाना चाहती है। तब समाज उसे स्वेच्छाचारी की उपाधि से अलंकृत करता है। स्थिति और भी गम्भीर हो जाती है जब स्त्री परित्यक्ता हो। नारी को परित्यक्त करने की परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है। रामायण की सीता को पतिव्रता होने के बावजूद भी राम द्वारा त्याग दिया गया। परित्यक्ता नारी की यथार्थ स्थिति को केन्द्रित करते हुए डॉ. हरिदास शेंडे लिखते हैं- "परित्यक्ता शब्द नारी के लिए गाली जैसा है। पति में कमी होने पर भी, उसके अन्यत्र अनुरक्त होने पर भी, उसके दुर्व्यवहार करने पर भी, उसके नशाखोरी करने पर भी, उसके लालची और विलासी होने पर भी, नारी को उसके दहलीज से ही चिपक कर बैठा रहना चाहिए कुछ इस प्रकार की मान्यता है इस समाज की।" (शेंडे, 2006, पृ. 23) भारतीय समाज व्यवस्था में पति द्वारा पत्नी को छोड़ देने के लिए एकाधिक वजह पाई जाती है। पत्नी पर एकाधिकार का अभ्यस्त पति जरा भी अपने अधिकार को धक्का पहुँचने पर झटके से पत्नी को त्याग देता है। स्त्री का चरित्र पवित्र होते हुए भी त्याग दिया जाता है। जब पति अपनी पत्नी का किसी कारणवश परित्याग कर देता है तो उस नारी का जीवन नारकीय हो जाता है। पुरुष अपनी इच्छानुरूप नारी का उपयोग करता है, जब उससे उसका मन भर जाता है तो उसे छोड़कर अन्यत्र सुख की खोज में लग जाता है। कुछ परित्यक्ता नारियाँ पति द्वारा तिरस्कृत होने पर भी पति से घृणा नहीं करती, उस पर अविश्वास नहीं करती और उसकी यादों में तिल-तिल घुट कर मर जाती हैं।

मालती जोशी के कथा -साहित्य में परिवार एवं समाज से जूझती परित्यक्ता नारियों का वर्णन रौंगटे खड़े करने वाला है। उनकी परित्यक्ता नारियाँ स्वयं निर्णय लेने में सक्षम हैं, जो उनकी चेतनशील प्रवृत्ति की परिचायक है। सन् 2001 में प्रकाशित कहानी संग्रह 'औरत एक रात है' में संग्रहीत कहानी 'पीर पर्वत हो गई' में नायिका निर्मल का पति प्रदीप अपनी विधवा भौजाई के साथ अवैध सम्बन्ध के कारण निर्मल को छोड़ देता है। "न कोई मारपीट न गाली-गलौज। न शादी से पहले उन लोगों ने पैसों की माँग की, न बाद में। न उनका दामाद शराबी था, न जुआरी। वहाँ तो किस्सा ही कुछ और था निर्मल का पति अपनी भौजाई के प्रेम में पागल था।" (जोशी, 2001, पृ. 107) इसी तरह की लक्खी देवी सुन्दास की कहानी 'तेस्रो घर'(तीसरा घर) है। पति के पास पैसे आते ही उसका रहन-सहन बदल जाता है और उस घर में दूसरी स्त्री, नायिका के पति की दूसरी पत्नी होकर आती है। आज जो धनवान पति है वह विवाह के समय एक सामान्य ठेकेदार था और नायिका मास्टरनी। तब पति के जीवन के हर मोड़ पर पत्नी ने साथ दिया, किन्तु आज पैसे

आते ही उसे छोड़ कर किसी दूसरी स्त्री को उसी घर में ले आया जो नायिका ने अपने पसीने से, त्याग से, अपने नारीत्व से निर्मित किया था। जब कभी भी नारी अपनी समस्याओं के खिलाफ आवाज उठाना चाहती है तो सबसे पहले उस आवाज को दबाने के लिए कोई स्त्री ही आती है। 'पीर पर्वत हो गई है' कहानी में जब निर्मल को अपने पति के बारे में पता चलता है तो वह अपनी बड़ी भाभी को बताती है तो भाभी बड़ी आसानी से कहती है- "कोई बात नहीं, दो जवान लोग एक घर में रहते हैं, तो ऐसा अक्सर हो जाता है, पर अब तुम आ गई हो, सब ठीक हो जायेगा।" (जोशी, 2001, पृ. 107) स्त्री जब इस बात की शिकायत करती है तो उसके अपने चरित्र पर लांछन लगने लगते हैं। कहानी में निर्मल की माँ जब समधिन के पास शिकायत लेकर जाती है तब निर्मल की सास कहती है-"यह तो सब हमें मालूम है। आप कौन सी नई बात बता रही हैं? पर हमें यह बताइए कि फिर आपकी बिटिया किस मर्ज की दवा है। हम तो बड़ी आशा से ब्याहकर लाए थे।" (जोशी, 2001, पृ. 109) वहीं तेस्रो घर कहानी में नायिका को समझाते हुए सास -ससुर आसानी से कहते हैं -"मिलकर रहना होगा, ऐसा ही होता है। (मिलेर बस्नुपर्छ, यस्तै त हुन्छ)।" (सुंदास, 1980, पृ. 22) जब अलग होने की बात होती है, तब फिर एक नयी चुनौती उसके सामने आती है। मायके वाले भी शांति से सब कुछ समाप्त करने के लिए राजी नहीं होते और घर में रंगमच की तरह पंचायत बैठाई जाती है। और वह मूक बनकर सारे घटनाक्रम को देखती है। अंत में पंचायत एक रकम निश्चित कर देती है, ताकि उसकी गुजर-बसर हो सके और सभी लोग इस सुझाव को मान भी लेते है तब उसका स्वाभिमान ऐसी दया को बर्दाश्त नहीं कर पाती है और कहती है-"नहीं चाहिए, मैं अपने पैरों पर खड़ी हो सकती हूँ। (चाहिए न,आफ्नै खुट्टामा उभिन सक्छु)।" (सुंदास, 1980, पृ. 23)

'पीर पर्वत हो गयी है' कहानी में नायिका सब कुछ भुलाकर उस पर पर्दा डालकर एक नयी शुरूवात करने की पहल करती है। तब निर्मल का पति निर्लज्ज ढंग से कहता है--"यह सब तो ऐसे ही चलेगा। तुम्हें रहना हो, रहो, नहीं तो रास्ता नापो।" (जोशी, 2001, पृ. 108) जब स्त्री स्वाभिमानी हो और वह हिम्मत करके आगे बढ़ने की कोशिश करती भी है तो उसे अपने ही घर वाले उसे आगे बढ़ने नहीं देते। निर्मल जब अपने बेटे को लेकर मायके आ जाती है तब वहाँ भी कुछ दिनों के बाद उसे भईया भाभी से तरह-तरह के ताने सुनने को मिलते हैं। "चार-छह महीने आराम से कट गए, फिर धीरे-धीरे सबके चेहरों से नकाब उतरने लगे। ऊब, खीज, उपेक्षा साफ झलकने लगी। जिस ठसक के साथ लौटी थी, वह कब की समाप्त हो गई। अब बस, एक लाचारी थी, विवशता थी।" (जोशी, 2001, पृ. 107) औरत का अपना कोई घर नहीं होता। पिता के घर में होती है तो कहा जाता है पराए घर में जाना है। ससुराल में जाती है तो कहा जाता है पराए घर से आई है। ससुराल में पति अगर दूसरी स्त्री ले आये तो ससुराल भी छूट जाता है। वह सदा बेघर बनी रहती है।

तेस्रो घर कहानी में नायिका पति से अलग होने के बाद वह एक अपना घर चाहती है और यही उसके जीवन का 'तेस्रो घर' बन जाता है। कहानी में जब उसकी भाभी उसे उस घर के बारे में कहती है-'यह घर तो तुम्हारा अपना ही घर है।' इस वाक्य से नायिका को सांत्वना के बदले में उसे और व्यथित बना देता है।

दाम्पत्य जीवन में संदेह, अवैध सम्बन्ध, पति -पत्नी के बीच मनमुटाव के कारण पति द्वारा त्यागी महिला को समाज, परिवार द्वारा भी त्यागा जाता है, उन्हें ही दोषी माना जाता है, भले ही उसमें वह दोषी हो

या न हो। जिसके कारण परित्यक्ता नारी को तरह -तरह की समस्याओं से जूझना पड़ता है। एक तो जीविका का संघर्ष और दूसरा अकेलेपन से उसे लड़ना पड़ता है। प्रेम विवाह करने वाली नारी को तो तीन स्तरों पर सामना करना पड़ता है। एक अपने माता -पिता का, दूसरा ससुराल वालों का, तीसरा समाज का। जिसने अपने माता-पिता की इच्छा के विरोध में विवाह किया, उसकी त्रासदी और भी बढ़ जाती है। माता -पिता भी ऐसी परित्यक्ता नारी का साथ नहीं देते हैं।

अतः यह दोनों कहानियां हमारे समाज में परित्यक्ता स्त्री की अवस्था पर प्रकाश डालती हैं। दोनों ही कहानी की नायिका स्वाभिमानी है, आत्मनिर्भर है। दोनों नायिका का स्वर दुःख से भरा हुआ तो है, पर उसमें थकान कहीं नहीं है,बल्कि स्थितियों के विपरीत चलने की क्षमता रखती है। दाम्पत्य जीवन जब बिखर जाता है तो आंतरिक रूप से केवल नारी ही बिखरी रह जाती है। सवालों का भण्डार केवल नारी के सामने ही रखा जाता है। पुरुष पुन: परिवार का सर्जन कर जीवन में आगे बढ़ जाते है किन्तु नारी रूढ़ियों परम्पराओं से प्रभावित होकर कठोर साधनामय जीवन व्यतीत करने में विवश हो जाती है। वैदिक काल से अब तक नारी को पुरुष के अधीन ही समझा गया है। आज भी प्रत्येक स्थिति में स्त्री को आधार के रूप में पुरुष का ही सहारा लेना पड़ता है। भारतीय समाज में स्त्रियों के मन-मस्तिष्क में यही एक बात बिठायी जाती है कि यह आश्रय यदि उससे छूट जाएगा तो वह कमजोर पड़ जाएगी। दूसरी ओर यदि स्त्री हिम्मत करके आवाज उठाती भी है तो उसे समाज शंका की नजर से देखता है। भले ही खोट पुरुष में हो, पर ऊँगलियाँ स्त्री पर ही उठती है। यदि वह अन्य व्यक्तियों के साथ मेल-जोल करके जीवन में आगे बढ़ना चाहती भी है तो उसे समाज व्यभिचारिणी सिद्ध कर देता है। वास्तविकता यह है कि स्त्री कितनी ही पवित्र क्यों न हो पुरुष और समाज के आगे स्थायी विश्वास तथा इज्जत कभी नहीं बना सकती। समाज की नजरों में स्त्री का नहीं, बल्कि उसके चरित्र का महत्व है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

Forster, E.M .(2002). *Aspects Of The Novel*.New york: Rosetta Books.

जाधव, डॉ.माधवी .(2005). *मन्नू भंडरी के साहित्य में चित्रित समस्याएँ.* कानपुर:विद्या प्रकाशन.

जोशी, मालती. (1997). *एक घर हो सपनों का.* नई दिल्ली: साक्षी प्रकाशन.

शेंडे, डॉ. हरिदास .(2006). *नारी सशक्तिकरण.* जयपुर: ग्रंथ विकास.

जोशी, मालती.(2001). *औरत एक रात है.* नई दिल्ली: परमेश्वरी प्रकाशन.

सुन्दास, लक्खीदेवी.(1980).*आहत अनुभूति*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.